



OPEN ACCESS

Volume: 4

Issue: 1

Month: March

Year: 2025

ISSN: 2583-7117

Published: 25.03.2025

Citation:

कमल किशोर “प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास” International Journal of Innovations in Science Engineering and Management, vol. 4, no. 1, 2025, pp. 333–342.

DOI:

10.69968/ijisem.2025v4i1333-342



This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Share Alike 4.0 International License

प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास

कमल किशोर¹

¹असिस्टेंट प्रोफेसर (श्री वर्धमान पीजी कन्या महाविद्यालय, ब्यावर)

सारांश

प्राचीन भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास कृषि, व्यापार, शासन और सांस्कृतिक परंपराओं द्वारा आकार लेने वाली एक गतिशील सभ्यता को दर्शाता है। भूमि राजस्व, वाणिज्य और शहरीकरण ने आर्थिक समृद्धि को प्रभावित किया, जबकि पारिवारिक संरचना, धर्म और सामाजिक पदानुक्रम ने दैनिक जीवन को परिभाषित किया। इन पहलुओं ने सामूहिक रूप से भारत के ऐतिहासिक विकास और सामाजिक विकास में योगदान दिया। इस लेख में प्राचीन भारत के आर्थिक और सामाजिक इतिहास पर विभिन्न साहित्य के अध्ययन की समीक्षा करें। इसने निष्कर्ष निकाला कि प्राचीन भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास कृषि, व्यापार और शासन द्वारा आकार लिया गया था। मौर्य और गुप्त दोनों काल के दौरान भूमि राजस्व आय का प्राथमिक स्रोत रहा, जो प्रशासनिक और सैन्य जरूरतों को पूरा करता था। सामाजिक संरचनाएं परिवार, धर्म और शहरीकरण से गहराई से प्रभावित थीं, जिससे सांस्कृतिक आदान-प्रदान और आर्थिक विकास को बढ़ावा मिला। हालाँकि, अस्पृश्यता जैसी असमानताएँ बनी रहीं, जो सदियों से हाशिए पर पड़े समुदायों को प्रभावित कर रही थीं। सुधारकों के प्रयासों के बावजूद, 1950 में ही भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता को समाप्त किया, कानूनी सुरक्षा और सामाजिक उत्थान सुनिश्चित किया। इन ऐतिहासिक गतिशीलता को समझने से भारत के आर्थिक और सामाजिक विकास में मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिलती है।

कीवर्ड: आर्थिक इतिहास, सामाजिक इतिहास, प्राचीन भारत, मौर्य काल, गुप्त काल, जाति व्यवस्था, आदि।

परिचय

भारत दक्षिण एशिया का एक देश है जिसका नाम सिंधु नदी से आया है। 'भारत' नाम का प्रयोग देश के संविधान में प्राचीन पौराणिक सम्राट भरत के संदर्भ में एक पदनाम के रूप में किया गया है, जिनकी कहानी भारतीय महाकाव्य महाभारत में आंशिक रूप से बताई गई है। पुराणों (5वीं शताब्दी ई. में लिखे गए धार्मिक/ऐतिहासिक ग्रंथ) के रूप में जाने जाने वाले लेखों के अनुसार, भरत ने पूरे भारत उपमहाद्वीप पर विजय प्राप्त की और शांति और सद्भाव से भूमि पर शासन किया। इसलिए, इस भूमि को भारतवर्ष (भारत का उपमहाद्वीप) के रूप में जाना जाता था।

भारतीय उपमहाद्वीप में होमिनिड गतिविधि 250,000 वर्षों से अधिक पुरानी है, और इसलिए यह ग्रह पर सबसे पुराने बसे हुए क्षेत्रों में से एक है। पुरातात्विक उत्खनन ने प्रारंभिक मनुष्यों द्वारा उपयोग की जाने वाली कलाकृतियों की खोज की है, जिसमें पत्थर के औजार भी शामिल हैं, जो इस क्षेत्र में मानव निवास और प्रौद्योगिकी के लिए एक बहुत ही प्रारंभिक तिथि का सुझाव देते हैं। जबकि मेसोपोटामिया और मिस्र की सभ्यताओं को सभ्यता में उनके प्रसिद्ध योगदान के लिए लंबे समय से मान्यता प्राप्त है, भारत को अक्सर नजरअंदाज किया गया है, विशेष रूप से पश्चिम में, हालांकि इसका इतिहास और संस्कृति उतनी ही समृद्ध है। सिंधु घाटी सभ्यता (सी। 7000-सी। 600 ईसा पूर्व) प्राचीन दुनिया की सबसे महान सभ्यताओं में से एक थी, जो मिस्र या मेसोपोटामिया से भी बड़े क्षेत्र में फैली हुई थी और एक समान रूप से जीवंत और प्रगतिशील संस्कृति का निर्माण करती थी।

यह चार महान विश्व धर्मों- हिंदू धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म और सिख धर्म के साथ-साथ चार्वाक के दार्शनिक स्कूल का जन्मस्थान है, जिसने वैज्ञानिक विचार और जांच के विकास को प्रभावित किया। प्राचीन भारत के लोगों के आविष्कारों और नवाचारों में आधुनिक जीवन के कई पहलू शामिल हैं जिन्हें आज सामान्य माना जाता है, जिनमें फलश शौचालय, जल निकासी और सीवर प्रणाली, सार्वजनिक पूल, गणित, पशु चिकित्सा विज्ञान, प्लास्टिक सर्जरी, बोर्ड गेम, योग और ध्यान शामिल हैं।

भारत का आर्थिक इतिहास

लगभग 500 ईसा पूर्व, महाजनपदों ने पंच-चिह्नित चांदी के सिक्के चलाए। इस अवधि को गहन व्यापार गतिविधि और शहरी विकास द्वारा चिह्नित किया गया

था। 300 ईसा पूर्व तक, मौर्य साम्राज्य ने तमिलकम को छोड़कर अधिकांश भारतीय उपमहाद्वीप को एकजुट कर लिया था, जिस पर तीन ताजधारी राजाओं का शासन था। परिणामी राजनीतिक एकता और सैन्य सुरक्षा ने एक आम आर्थिक प्रणाली और बढ़े हुए व्यापार और वाणिज्य के साथ-साथ कृषि उत्पादकता में वृद्धि की अनुमति दी। मौर्य साम्राज्य के बाद शास्त्रीय और प्रारंभिक मध्ययुगीन साम्राज्य आए, जिनमें चोल, पांड्य, चेर, गुप्त, पश्चिमी गंग, हर्ष, पाल, राष्ट्रकूट और होयसल शामिल थे। भारतीय उपमहाद्वीप, अपनी विशाल जनसंख्या के कारण, पहली और 18वीं शताब्दी के बीच के अधिकांश अंतराल में दुनिया के किसी भी क्षेत्र की तुलना में सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था थी। एंगस मैडिसन का अनुमान है कि 1-1000 ई. तक भारत दुनिया की जनसंख्या और सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 30% था।

प्राचीनकाल से 1707 ई. तक

भारत का इतिहास सिंधु घाटी सभ्यता के उदय से शुरू होता है जो 3500 ईसा पूर्व से 1800 ईसा पूर्व के बीच फली-फूली। सिंधु सभ्यता की अर्थव्यवस्था व्यापार पर काफी हद तक निर्भर करती थी, जिसे परिवहन में प्रगति द्वारा सुगम बनाया गया था। इसके नागरिक कृषि करते थे, जानवरों को पालते थे, तांबे, कांसे और टिन से तेज उपकरण और हथियार बनाते थे और टेराकोटा के बर्तन, मोतियों, सोने और चांदी, फ़िरोज़ा और लापीस लाजुली जैसे रंगीन रत्न पत्थरों, धातुओं, चकमक पत्थरों, सीपियों और मोतियों का व्यापार करते थे। वे मेसोपोटामिया पहुँचने के लिए जहाज़ों का उपयोग करते थे जहाँ वे सोना, तांबा और आभूषण बेचते थे। लगभग 600 ईसा पूर्व, महाजनपदों ने पंच-चिह्नित चांदी के

सिक्के चलाए। इस अवधि को गहन व्यापार गतिविधि और शहरी विकास द्वारा चिह्नित किया गया था। 300 ई.पू. तक, जब मध्य पूर्व ग्रीक सेल्यूसिड और टॉलेमिक साम्राज्यों के अधीन था, मौर्य साम्राज्य (लगभग 321 - 185 ई.पू.) ने भारतीय उपमहाद्वीप के अधिकांश भाग को एकजुट कर दिया था। राजनीतिक एकता और सैन्य सुरक्षा ने एक सामान्य आर्थिक प्रणाली की अनुमति दी और कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ व्यापार और वाणिज्य को बढ़ाया। साम्राज्य ने पूरे भारत में सड़कें बनाने और उनके रखरखाव में काफी संसाधन खर्च किए। बेहतर बुनियादी ढांचे के साथ बढ़ी हुई सुरक्षा, माप में अधिक एकरूपता और मुद्रा के रूप में सिक्कों के बढ़ते उपयोग ने व्यापार को बढ़ाया। अगले 1500 वर्षों तक, भारत ने अपनी शास्त्रीय सभ्यताओं का निर्माण किया, जिससे भारी मात्रा में धन उत्पन्न हुआ। ऐसा अनुमान है कि पहली और 17वीं शताब्दी ईस्वी के बीच, भारत प्राचीन और मध्ययुगीन दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था था, जो दुनिया की एक तिहाई से एक चौथाई संपत्ति पर नियंत्रण रखता था।

मुगल काल (1526-1858 ई.) के दौरान भारत ने इतिहास में अभूतपूर्व समृद्धि का अनुभव किया। 16वीं शताब्दी में भारत का सकल घरेलू उत्पाद विश्व अर्थव्यवस्था का लगभग 25.1% होने का अनुमान लगाया गया था। भारत की उपनिवेश-पूर्व अर्थव्यवस्था का अनुमान है कि 1600 ई. में सम्राट अकबर के खजाने का वार्षिक राजस्व £17.5 मिलियन था (इसके विपरीत दो सौ साल बाद 1800 ई. में ग्रेट ब्रिटेन के पूरे खजाने का कुल राजस्व £16 मिलियन था)। 1600 ई. में मुगल भारत का सकल घरेलू उत्पाद विश्व अर्थव्यवस्था का लगभग 24.3% था, जो दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा था। इस समय

तक मुगल साम्राज्य का विस्तार लगभग 90 प्रतिशत दक्षिण एशिया तक हो गया था, और एक समान सीमा शुल्क और कर-प्रशासन प्रणाली लागू की गई थी। 1700 ई. में बादशाह औरंगजेब के खजाने का वार्षिक राजस्व £100 मिलियन से अधिक था।

यूरोपीय संघ और मौर्य साम्राज्य

1. आर्थिक प्रणाली

यूरोपीय संघ ने मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाई। यूरोपीय संघ का आर्थिक इंजन इस क्षेत्र का एकल बाजार है। यह अधिकांश वस्तुओं, सेवाओं, धन और लोगों को क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने की अनुमति देता है। यूरोपीय संघ का लक्ष्य इस विशाल संसाधन को अन्य क्षेत्रों में भी विकसित करना है। जैसे ऊर्जा, प्रौद्योगिकी, ज्ञान और पूंजी बाजार ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यूरोपीय लोग इससे अधिकतम लाभ उठा सकें। मौर्य साम्राज्य एक केंद्रीय रूप से नियोजित (मिश्रित) आर्थिक प्रणाली थी जो राजशाही द्वारा सुरक्षित थी। राजा के पास सारी आर्थिक शक्ति होती थी, परंतु उनके राज्यों (जनपद) के पास भी शक्ति होती थी। मेगस्थनीज के अनुसार, तीन समानांतर प्रशासनिक संरचनाओं ने चंद्रगुप्त के शासन को चिह्नित किया। एक व्यक्ति गाँवों के मामलों का प्रबंधन करता था, सिंचाई सुनिश्चित करता था, भूमि स्वामित्व दर्ज करता था, औजारों की आपूर्ति की निगरानी करता था, शिकार, लकड़ी के उत्पाद और वन-संबंधी कानून लागू करता था और विवादों का निपटारा करता था। एक अन्य प्रशासनिक संरचना शहर के मामलों का प्रबंधन करती थी, जिसमें व्यापार, व्यापारी गतिविधि, विदेशियों की यात्रा, बंदरगाह, सड़कें, मंदिर, बाजार और उद्योगों से संबंधित सभी मामले शामिल थे। वे कर भी वसूलते थे

और मानकीकृत वजन और माप सुनिश्चित करते थे। तीसरा प्रशासनिक निकाय सेना, उसके प्रशिक्षण, हथियारों की आपूर्ति और सैनिकों की ज़रूरतों की देखरेख करता था (Shukla, 2021).

2. आर्थिक उन्नति

यूरोपीय संघ का लक्ष्य गरीबी से लड़ना और सतत विकास प्राप्त करना है। यूरोपीय संघ के संस्थान और देश विश्व में विकास सहायता और सहयोग के अग्रणी दाता हैं। यूरोपीय संघ के कानून, नीतियां और सुशासन, मानव तथा आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए हैं, जैसे भूख से लड़ना और क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना। यूरोपीय संघ की नीतियों का उद्देश्य संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों को प्रोत्साहित करना भी है। यूरोपीय संघ के संस्थान सतत विकास के निम्नलिखित पाँच पहलुओं को संबोधित करने के लिए एक साथ काम करते हैं और धन मुहैया कराते हैं: लोग: सभी रूपों में गरीबी और भूख को समाप्त करना और सम्मान और समानता सुनिश्चित करना। पर्यावरण विनाश और संसाधनों की कमी से भावी पीढ़ियों की रक्षा करना। प्रकृति के साथ सामंजस्य में समृद्ध और संतुष्ट जीवन सुनिश्चित करना। शांतिपूर्ण, न्यायपूर्ण और समावेशी समाज बनाना। वैश्विक भागीदारी के माध्यम से विकास कार्य को लागू करना। मौर्य साम्राज्य ने कई परस्पर संबंधित चर (विकास कारक) और द्वि-दिशात्मक कारणता के साथ एक बहुआयामी विकास मॉडल को भी पोषित किया। उनके सिद्धांत में, यह कोई रहस्य नहीं था कि क्यों कुछ साम्राज्य तेज़ वृद्धि दर्ज करेंगे और अन्य धीमी गति से क्यों आगे बढ़ेंगे। मौर्य साम्राज्य में, उनके मॉडल का केंद्रीय भाग कृषि और मत्स्य पालन था। ये दो मुख्य क्षेत्र थे जो राजा और

राज्य के लिए अतिरिक्त मूल्य और धन उत्पन्न करते थे। खनन उद्योग भी धन का एक आवश्यक स्रोत था, जिसके चार औद्योगिक स्तर थे: राज्य एकाधिकार (हथियार बनाने और शराब बनाने से संबंधित), राज्य-नियंत्रित उद्योग (कपड़ा, नमक और आभूषण), राज्य-विनियमित छोटे उद्योग (शिल्पकार-सुनार, लोहार), और निजी उद्योग (जो स्वतंत्र, अनियमित थे)- कुम्हार, टोकरी बनाने वाले और अन्य। चाणक्य के पाठन में अन्य प्रकार के उद्योगों पर प्रत्यक्ष रूप से विचार नहीं किया गया है। जबकि कौटिल्य द्वारा वर्णित आर्थिक व्यवस्था में राज्य प्रमुख था और अक्सर एक विशेषाधिकार प्राप्त एकाधिकारवादी की स्थिति में था, राज्य और निजी क्षेत्र के बीच सहयोग को भी प्रोत्साहित किया गया था। कौटिल्य का मत था कि "एक मजबूत निजी क्षेत्र राज्य की ताकत का मार्ग है"।

प्राचीन भारत में जाति व्यवस्था का विकास

जाति हजारों वर्षों का विकास है, जो एक ही सांस्कृतिक व्यवस्था में कई अलग-अलग नस्लीय और अन्य समूहों के संघटन से उत्पन्न हुआ है। ऋग्वैदिक समाज व्यावहारिक रूप से जाति व्यवस्था से मुक्त था। इस काल में वर्ण व्यवस्था विद्यमान थी तथा समाज चार वर्गों में विभाजित था तथा वे व्यवसाय पर आधारित थे। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि जाति व्यवस्था उत्तर वैदिक काल के दौरान विकसित हुई।

1. उत्तर वैदिक काल

उत्तर वैदिक काल के दौरान कई बदलाव हुए। कई राजनीतिक विकास हुए: कई आदिवासी पहचानों को क्षेत्रीय पहचान मिली। यह जातियों के उदय और विकास के बहुत करीब है। उभरी क्षेत्रीय इकाइयाँ या जनपदों का नाम उत्तर वैदिक काल में ऐसे शहरों के उदय के

कारण वहां बसे जन (जनजातियों) के नाम पर रखा गया था, जैसे कुरु, पंचाल, गांधार, मत्स्य, सेडी मगध आदि। उत्तर वैदिक काल में ऐसे शहरों के उदय के कारण जाति एक महत्वपूर्ण कारक बन गई। जाति (जन्म के आधार पर निर्दिष्ट) शब्द का उपयोग करके रिश्तेदारी संबंधों पर जोर दिया गया। यह शब्द सबसे पहले उत्तर वैदिक ग्रंथों में आता है और इसका प्रयोग विस्तृत परिवार के अर्थ में किया जाता है। इस शब्द का प्रयोग कात्यायन श्रौतसूत्र में किया गया था, जहाँ हम जन (जनजाति) के संदर्भों में कमी और जाति के संदर्भों में वृद्धि देख सकते हैं। बाद में पाली साहित्य में जाति का प्रयोग जाति के अर्थ में किया गया है, जिसका तात्पर्य एक अंतर्विवाही संबंध से है, जो सामाजिक स्तरीकरण में वृद्धि को दर्शाता है।

कृषि के गहनीकरण ने गंगा घाटी में शहरों के विकास के लिए आर्थिक आधार प्रदान किया। उभरते शहरी केंद्रों ने अपना स्वयं का सामाजिक स्तरीकरण तैयार किया। संघ एक आवश्यक संस्था के रूप में उभर रहा था। यह विशेष व्यवसायों और सेवा संबंधों की सूची में स्थान रखता था। इसलिए, उत्तर वैदिक काल में जाति ने वर्ण को पीछे छोड़ दिया। जैसे-जैसे समय बीतता गया, सामाजिक स्तरीकरण बहुत कठोर होता गया और लोगों की सामाजिक स्थिति व्यवसाय पर नहीं बल्कि जन्म पर अधिक से अधिक आधारित होती गई। पहले वर्ण विनिमेय थे और ऋग्वेद में अलग-अलग वर्णों को मानने वाले लोगों के एक साथ रहने का उल्लेख है। लेकिन जाति व्यवस्था में सामाजिक गतिशीलता की अनुमति नहीं थी और जाति समूह निर्विवाद रूप से विभाजित हो गए। बाद में, मुख्य चार जातियों को कई उप-जातियों में विभाजित किया गया, जिनमें से प्रत्येक को बड़े जाति

समूह के भीतर एक निश्चित स्थिति और स्थान प्राप्त था।

2. मौर्य-पूर्व काल में जाति व्यवस्था

यदि हम मौर्य-पूर्व काल में जाति व्यवस्था के विकास का अध्ययन करना चाहते हैं, तो हमें बौद्ध साहित्य का संदर्भ लेना चाहिए। यद्यपि गौतम बुद्ध ने जन्म के आधार पर जाति भेद के विरुद्ध उपदेश दिया था, फिर भी जाति की संस्था धीरे-धीरे विकसित होती रही। इसकी जड़ें समाज में गहरी थीं। ब्राह्मणों को श्रेष्ठ जाति माना जाता था। विनय पिटक के पचितलियापाली ने जाति को निम्न जातियों (चंडाल, वेना, इक्षसद, रथकार और पुक्कुसा) और उच्च जातियों (खटिया और ब्राह्मण) के रूप में विभेदित किया है। लेकिन इस शब्द का प्रयोग वहां भी जन्म, प्रजाति, वर्ण और जनजाति के अर्थ में किया गया है, जो दर्शाता है कि जाति व्यवस्था आदिवासी वर्ण व्यवस्था से विकसित हुई है। संघ-गण, जो दो वर्ण व्यवस्था (क्षत्रिय और दास-कर्मकार) पर आधारित थे, के साथ वर्ण वर्गों, यानी स्वामी और दासों का पर्याय बन गए थे, जबकि विघटित संघ-गण स्वयं बुद्ध के बाद के काल में जातियों में बदल रहे थे। इन संघ-गणों के अलावा, अन्य आदिवासी राज्यों और वर्गहीन जनजातियों को नए गैर-आदिवासी सामंती राज्यों द्वारा जातियों के रूप में शामिल किया जा रहा था।

3. मौर्य काल के दौरान जाति

300 ईसा पूर्व के आसपास भारत में यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने अपनी रचना इंडिका में कहा है कि भारत की आबादी सात अंतर्जातीय और शिल्प विशेष समूहों में विभाजित थी। वे दार्शनिक, सैनिक, सरकारी अधिकारी,

कारीगर और व्यापारी, पशुपालक और पार्षद हैं। मेगस्थनीज़ के साक्ष्य इस प्रकार इंगित करते हैं कि लोगों को सात श्रेणियों में विभाजित किया गया था, जो वंशानुगत समूहों या जातियों के बजाय व्यावसायिक समूह थे। उनका सात गुना विभाजन निश्चित रूप से गलत है, लेकिन यह दिखाने के लिए सबूत देता है कि मौर्य काल में वर्ग विभाजन पहले से ही सख्त थे। 300 ईसा पूर्व में जातियों की संख्या सात से कहीं अधिक थी, जैसा कि हम सूत्रों और प्रारंभिक बौद्ध साहित्य से जानते हैं। लेकिन चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में रहने वाले मेगस्थनीज़ उनमें से केवल कुछ के संपर्क में आ सके और उन कुछ में से भी, वह एक विदेशी होने के कारण, इन समूहों के भीतर जातिगत अंतर को नहीं समझ सके। साथ ही, इस अवधि के दौरान कुछ नए जाति समूह विकसित हुए, जिन्होंने जाति को अपने व्यवसाय के साथ जोड़ दिया। ये जटिलताएँ उनसे छूट गई होंगी और उन्होंने भारत में जाति व्यवस्था को गलत समझा होगा, लेकिन सूत्र साहित्य से हम इस काल और उत्तर मौर्य काल की जाति व्यवस्था को समझ सकते हैं।

4. मौर्योत्तर काल में जाति व्यवस्था

इस अवधि के दौरान जाति व्यवस्था को और अधिक संस्थागत बनाया गया। मनुस्मृति के अनुसार, कई मिश्रित संकर वर्णों की उत्पत्ति विभिन्न वर्णों के बीच विवाह में है। इन्हें अनुलोम और प्रतिलोम कहा जाता था। बौद्ध ग्रंथों और अन्य साक्ष्यों से भी इस बात में कोई संदेह नहीं है कि तथाकथित मिश्रित जातियाँ वास्तव में विभिन्न कलाओं और शिल्पों का अनुसरण करने वाले लोगों के संघों जैसे संगठन से उत्पन्न हुई थीं। इस अवधि के सबसे महत्वपूर्ण विकासों में से एक इंडो-यूनानियों, शकों, यवनों, कुषाणों, पार्थियन आदि जैसे

विदेशियों का भारतीय समाज में धीरे-धीरे समावेश था और इस प्रकार उनकी अपनी विशिष्ट जीवन-शैली वाली उपजातियाँ बनीं। विभिन्न जातियों के बीच अंतर्विवाहों ने कई नई जातियों को जन्म दिया।

5. गुप्त काल में जाति व्यवस्था

जातियों के प्रसार के कारण वर्ण व्यवस्था में काफी बदलाव आया। क्षत्रिय जाति हूणों और उसके बाद गुज्जरों के आगमन के साथ बढ़ी, जो राजपूतों के रूप में उनके रैंक में शामिल हो गए। शूद्र जातियों और अछूतों की संख्या में वृद्धि मुख्य रूप से पिछड़े वन जनजातियों के स्थायी वर्ण समाज में समावेश के कारण हुई। अक्सर शिल्पकारों के संघ जाति में बदल जाते थे। ऐसा माना जाता है कि भूमि या भू-राजस्व के हस्तांतरण ने एक नई जाति, कायस्थ (शास्त्री) को जन्म दिया। उत्तरी भारत के ग्रामीण इलाकों में गांव के बुजुर्गों और मुखियाओं का एक वर्ग उभरा, जिन्हें महतारा कहा जाता था, जिन्हें भूमि हस्तांतरण की सूचना देनी होती थी। बाद में इन्हें भी एक जाति में वर्गीकृत कर दिया गया। इस तरह गुप्त काल में जाति व्यवस्था और विकसित हुई।

6. गुप्तोत्तर काल में जाति व्यवस्था

7वीं ई. से, समाज में दो प्रवृत्तियाँ देखी गईं। एक विदेशी तत्वों के आत्मसात की निरंतरता और दूसरी जाति व्यवस्था का पृथक्करण। उस काल के कानून ने जाति के निर्धारण में जन्म, पेशे और निवास को निर्णायक कारक के रूप में स्वीकार किया। मध्यकाल में मुस्लिम आक्रमणों ने जाति व्यवस्था की कठोरता को और बढ़ा दिया। इसके अलावा भारत में इस्लाम के प्रसार का मुकाबला करने के लिए कई नए धार्मिक

संप्रदायों- सिख, दाउदपंथी, वैष्णव और सतनामियों की स्थापना की गई। कालान्तर में इन सम्प्रदायों और उनकी विभिन्न शाखाओं ने अनेक नई उपजातियों को भी जन्म दिया। इस प्रकार मुसलमानों के आक्रमणों ने इस काल में जाति व्यवस्था को और अधिक कठोर बना दिया तथा अनेक उपजातियों की स्थापना हुई।

साहित्य समीक्षा

(Rooney & Murthy, 2020) आर्थिक रूप से सफल मानी जाने वाली एक प्राचीन सभ्यता की जांच करती है, जिसका नाम मौर्य साम्राज्य (322 से 85 ईसा पूर्व) है, जो भारत-गंगा के मैदानों पर केंद्रित था। सामूहिक रूप से अर्थशास्त्र (शाब्दिक रूप से धन का विज्ञान) के रूप में जानी जाने वाली पुस्तकों के अनुवादों के साथ-साथ समकालीन ग्रीक और रोमन ग्रंथों के आधार पर, यह शोधपत्र आय वितरण के सामाजिक मानदंडों और सामाजिक व्यवस्था के संरक्षण के भीतर धन पैदा करने में संस्थानों की भूमिका की जांच करता है। इस समाज के लिए व्यापार के महत्व को देखते हुए, बाजार समन्वय और व्यापारिक बाजारों में सामान्यीकृत विश्वास के रखरखाव के संदर्भ में मध्ययुगीन यूरोपीय संस्थानों के साथ तुलना की जाती है। परिणामस्वरूप, एक प्राचीन समाज को प्रभावित करने वाली सामाजिक और आर्थिक अनिश्चितता को दूर करने में संस्थानों की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

(Khanna, 2021) जांच से पता चलता है कि भारतीय उपमहाद्वीप के व्यवसायी बहुत शुरुआती दौर से ही कॉर्पोरेट रूप का उपयोग करते थे। कॉर्पोरेट फॉर्म (उदाहरण के लिए, श्रेणी) का उपयोग भारत में लगभग 800 ईसा पूर्व से किया जा रहा था। और तब से 1000 ई. के आसपास इस्लामी आक्रमणों के आगमन तक

कमोबेश निरंतर उपयोग में था। इसके अलावा, जब जांच की गई कि इन संस्थाओं को कैसे संरचित, शासित और विनियमित किया गया तो हम पाते हैं कि उनमें निगमों और वास्तव में आधुनिक अमेरिकी निगमों के साथ कई समानताएं हैं। इसके अलावा, श्रेणी के ऐतिहासिक विकास की जांच से पता चलता है कि इसके विकास के लिए अग्रणी कारक यूरोप में संगठनात्मक संस्थाओं के विकास के लिए सामने रखे गए कारकों के अनुरूप हैं। अंत में, प्राचीन भारत में श्रेणी के विकास की जांच व्यापार और कॉर्पोरेट स्वरूप के विकास के लिए राज्य संरचना के महत्व के साथ-साथ कॉर्पोरेट प्रशासन में कुछ प्रकार के अभिसरण की संभावनाओं पर प्रकाश डालती है।

(Shukla, 2021) यह शोधपत्र तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व और तीसरी शताब्दी ई.पू. के बीच प्राचीन भारत में आर्थिक नेतृत्व की जांच करता है। उस युग के दौरान, चाणक्य नामक एक दार्शनिक, अर्थशास्त्री, न्यायविद और शाही सलाहकार ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक ग्रंथ अर्थशास्त्र की रचना की थी। उन्होंने अपनी पुस्तक में आर्थिक विकास, कर और मिश्रित अर्थव्यवस्था जैसे कई आर्थिक सिद्धांतों पर चर्चा की है। उन्हें भारत में राजनीतिक अर्थशास्त्र का अग्रदूत माना जाता है, और उनके काम को शास्त्रीय अर्थशास्त्र का एक अनिवार्य अग्रदूत माना जाता है। यह शोधपत्र आधुनिक समय के यूरोपीय संघ और प्राचीन काल के मौर्य साम्राज्य के बीच राजनीतिक और आर्थिक संघ के तुलनात्मक विश्लेषण द्वारा चाणक्य के सिद्धांतों का मूल्यांकन करता है।

(KOCHHAR, 2020) हमारी वर्तमान समझ के स्तर पर, पुरातत्व और पवित्र ग्रंथ दो अलग-अलग धाराएँ हैं

जो एक दूसरे को नहीं काटती हैं। इसलिए हमें विभिन्न स्रोतों से साक्ष्य एकत्र करने चाहिए और एक संश्लेषण बनाने का प्रयास करना चाहिए। मध्य एशिया के पुरातात्विक साक्ष्यों पर ध्यान देना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस पर उतना ध्यान नहीं दिया गया जितना दिया जाना चाहिए। विज्ञान में जो सर्वविदित है, उसे इतिहास के मामले में भी ध्यान में रखना चाहिए। एक सिद्धांत को मान्य होने के लिए प्रत्येक तथ्य (वर्तमान में ज्ञात या भविष्य में ज्ञात होने वाला) को स्व-संगत तरीके से स्पष्ट करना चाहिए। इसके विपरीत, भले ही कोई एक सबूत हो जिसे कोई सिद्धांत स्पष्ट करने में असमर्थ हो, उसे रोक दिया जाना चाहिए, संशोधित किया जाना चाहिए या अस्वीकार भी किया जाना चाहिए।

(Akter, 2020) युगों के विभाजन के अनुसार, प्राचीन भारत के बारे में प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक बंगाल के बीच ज्ञान के स्रोतों की कमी है। फिर से प्राचीन भारत के कुछ ऐसे स्रोत मिले हैं जिन्हें अब तक समझा नहीं जा सका है। यही कारण है कि प्राचीन भारत के बारे में जानकारी खोजना बहुत कठिन है। सभी प्रकार की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए प्राचीन भारत के बारे में जानने का प्रयास किया जाता है। मुझे वर्तमान शोध पर काम करने के लिए कई पुस्तकों और लेखों की मदद लेनी पड़ी है। किताबें और लेख पढ़ने के बाद मुझे वहाँ से बहुत सावधानी से जानकारी एकत्र करनी होती है। इनमें से सभी डेटा को बाहर निकालने और शामिल करने के बाद मैं उन सूचनाओं का उपयोग अपने शोध में करता हूँ। इसके अलावा विभिन्न सिक्कों, भूमि के दस्तावेजों, ताम्रपत्रों आदि से भी उस समय की

आर्थिक स्थिति के बारे में जानकारी एकत्रित की गई है।

(Mehta, 2018) यह लेख चार भागों में विभाजित है। पहला भाग दर्शकों को प्राचीन भारतीय लोकाचार से परिचित कराता है, जहां धर्म (कर्तव्य) सभ्यता की रीढ़ था जिसने समाज को धार्मिक और कर्तव्य-केंद्रित बनाया। दूसरा भाग प्राचीन भारत की आर्थिक गतिविधियों का अवलोकन देता है और साथ ही क्षेत्रीय नियमों का संक्षिप्त विवरण भी देता है। कवर किए गए क्षेत्र हैं: खान और खनिज, कृषि, उद्योग, वन उपज, शराब, व्यापार और वाणिज्य, परिवहन और संचार, वित्त और न्याय प्रशासन। तीसरा भाग तत्कालीन नियमों का प्रतिस्पर्धा विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें राज्य के एकाधिकार, नियामक और प्रतिस्पर्धी के रूप में राज्य, गिल्ड प्रणाली की व्यापकता, विभेदक नियामक उपचार, मूल्य नियंत्रण, कार्टेल का उपचार और उपभोक्ता संरक्षण का विश्लेषण किया गया। चौथा भाग निष्कर्ष है।

(Rooney & Murthy, 2024) प्राचीन मौर्य साम्राज्य (321-185 ईसा पूर्व) की जांच करते हैं, जो भारत-गंगा के मैदानों पर केंद्रित था। सामूहिक रूप से अर्थशास्त्र (शाब्दिक रूप से धन का विज्ञान) के रूप में जानी जाने वाली पुस्तकों के अनुवादों के साथ-साथ पुरातात्विक खोजों, द्वितीयक साहित्य और समकालीन ग्रीक ग्रंथों के आधार पर, यह शोधपत्र वाणिज्य और व्यापार के माध्यम से अपने नागरिकों के लिए धन उत्पन्न करते हुए सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में संस्थागत अनुष्ठानों की भूमिका का पता लगाता है। इन अनुष्ठान संस्थागत नियंत्रणों द्वारा आकार दिया गया, नैतिक व्यवहार को मजबूत किया गया। नतीजतन, हम आर्थिक और सामाजिक मूल्यों पर विवाद होने पर प्राचीन

नागरिकों के व्यवहार को निर्देशित करने के लिए संस्थानों की महत्वपूर्ण और परिष्कृत भूमिका को उजागर करने के लिए पूर्व-औद्योगिक व्यवसाय इतिहास के पिछले विद्वानों के काम पर निर्माण करते हैं।

(Deodhar, 2023) साम्यवाद, पूंजीवाद और प्राचीन भारतीय लेखन के समग्र दृष्टिकोण जैसे वैकल्पिक आर्थिक विचारों का संक्षेप में सारांश देता है। मैं एक व्यक्ति के लिए कल्याणकारी ईंट के विचार पर चर्चा करता हूँ जिसमें तीन आयाम शामिल हैं- पुरुषार्थ, आश्रम और वर्ण। कल्याणकारी ईंट की रूपरेखा को देखते हुए, मैं राज्य की अवधारणा और उसकी आर्थिक नीतियों पर चर्चा करता हूँ, उसके बाद बाज़ारों, कीमतों, ब्याज दरों और ऋण के बारे में चर्चा करता हूँ। इसके बाद, मैं भूमि, संपत्ति के अधिकार और गिल्ड और यूनियनों के उपचार पर चर्चा करता हूँ, जिसमें अर्थशास्त्र और शुक्रनीतिसार में शामिल श्रम संबंधों पर विशेष ध्यान दिया गया है। अंतिम भाग शुक्रनीतिसार के लेखक द्वारा घर के मुखिया को दी गई आर्थिक सलाह का सारांश प्रस्तुत करता है। अंत में, समापन टिप्पणियों में, मैं आधुनिक समय के लिए शिक्षाशास्त्र और आर्थिक नीतियों दोनों के लिए प्राचीन भारतीय लेखन की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता हूँ।

निष्कर्ष

प्राचीन भारत के आर्थिक और सामाजिक इतिहास को कृषि, व्यापार, शासन और सामाजिक संरचनाओं सहित विभिन्न परस्पर जुड़े कारकों द्वारा आकार दिया गया था। साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोत मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं, हालांकि कोई भी एकल स्रोत अवधि की जटिलताओं को पूरी तरह से समझा नहीं सकता है। मौर्य और गुप्त शासकों ने प्रशासनिक

आवश्यकताओं, सैन्य विस्तार और कूटनीतिक प्रयासों का समर्थन करते हुए आय के प्राथमिक स्रोत के रूप में भूमि राजस्व पर बहुत अधिक भरोसा किया। व्यापार और वाणिज्य ने विदेशी क्षेत्रों के साथ बातचीत को बढ़ावा देते हुए आर्थिक विकास में भी योगदान दिया। सामाजिक रूप से, तीसरी और छठी शताब्दियों के बीच प्राचीन भारतीय जीवन पारिवारिक संरचनाओं, धर्म, अनुष्ठानों और शहरीकरण से प्रभावित था। पितृसत्तात्मक मानदंड हावी थे, फिर भी महिलाओं ने घरेलू और सांस्कृतिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं। हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म और जैन धर्म ने सामाजिक मूल्यों को आकार दिया, जबकि व्यापार ने शहरीकरण और सांस्कृतिक आदान-प्रदान लाया। प्रगति के बावजूद, कठोर जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता की संस्था बनी रही, जिससे काफी कठिनाइयाँ हुईं। हालाँकि, 19वीं और 20वीं सदी में सामाजिक सुधार आंदोलनों ने 1950 में कानूनी उन्मूलन को जन्म दिया, जिससे हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए संवैधानिक सुरक्षा सुनिश्चित हुई। इस प्रकार, प्राचीन भारत की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाएँ परंपरा और परिवर्तन के संतुलन के माध्यम से विकसित हुईं, जिसने इसके ऐतिहासिक विकास पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा और इसके आधुनिक सामाजिक ढांचे को आकार दिया।

संदर्भ

- [1] J. Rooney and V. Murthy, "Management and social order in ancient India," 2024.
- [2] B. B. Satpathy, "Socio-Political and Administrative History of Ancient India (Early time to 3 rd Century A.D)."
- [3] S. C. Mishra, "On the reliability of pre-independence agricultural statistics in Bombay and Punjab," Univ. East Angl. Engl., 2015.
- [4] D. Clingingsmith and J. G. Williamson, "India's Deindustrialization in the 18th and 19th Centuries."

- [5] Druti and S. Sharma, "ECONOMIC HISTORY OF INDIA FROM 1757-1947 AD," 2020.
- [6] K. Ray and P. B. Reddy, "Economic History of India (from earliest to 1707 AD)."
- [7] N. Sharma, B. Mohanty, yoti T. Sharma, and M. L. Vaiphei, "ANCIENT INDIAN POLITICAL THOUGHT," VIKAS® Publ. HOUSE PVT. LTD, 2015, [Online]. Available: www.vikaspublishing.com
- [8] N. Bhattacharya, The logic of tenancy cultivation: central and south-east Punjab, 1870-1935. 2015.
- [9] PradeepD.Waghmare, Y. SamuelWesley, and P. U. Yadav, "SOCIAL, ECONOMIC AND ADMINISTRATIVE HISTORY OF EARLY INDIA (UPTO 1000 CE)," Inst. ofDistance Open Learn. , Univ. ofMumbai, Vidyanagari, 2021.
- [10] G. Nayak, "Socio-Cultural and Economic History of Modern India," SKCG Coll. Paralakhemundi.
- [11] R. L, "SOCIAL Life In Ancient India: Exploring Family, Gender, Religion, Trade, And Urbanization (3rd- 6th Centuries)," 2024.
- [12] R. Gurukkal, "History in Early Indian Traditions: A Deconstructive Exploration into Inter-textuality," SAGE Publ., 2016.
- [13] S. Shukla, "An Analysis of Economic Philosophy and Leadership in Ancient India," 2021.
- [14] S. Y. Deodhar, "Tracing Economic Policies to Ancient Indian Economic Ethics," 2023.
- [15] R. S. Sharma and D. N. Jha, "The Econocmic History of India Up To AD 1200: Trends and Prospets," J. Econ. Soc. Hist. Orient.
- [16] M. G. Marsh, "Ancient India in Historical Outline," 2015.
- [17] R. KOCHHAR, "Ancient Indian history: What do we know and how ?," 2020.
- [18] M. of culture G. India, "Economic History and Economic Thoughts of india: Ancient Perspectives," 2023.
- [19] Consulate General of India, "History of Indian Economy." [Online]. Available: <http://cgijeddah.mkcl.org/WebFiles/History-of-Indian-Economy.pdf>
- [20] Rajiv Gandhi university Arunachal Pradesh, "History of India (Early Times-1200 Ad)." [Online]. Available: https://rgu.ac.in/wp-content/uploads/2021/02/Download_604.pdf
- [21] B. prasad Sahu, "Economic Historiography of Early India."
- [22] S. Samel, S. Nabar, and P. AnuradhaRanade, "S.Y.B.A. HISTORYPAPER - III ANCIENT INDIA (up to 1000 A.D.)," 2019.
- [23] J. Rooney and V. Murthy, "Institutions, social order and wealth in ancient India," J. Institutional Econ., 2020.
- [24] V. Khanna, "THE ECONOMIC HISTORY OF THE CORPORATE FORM IN ANCIENT INDIA," 2021.
- [25] I. Akter, "Economic System of Ancient India: Maurya and Gupta Empire Irin," 2020.
- [26] P. S. Mehta, "Economic regulations, competition, and consumer protection in ancient India," 2018. doi: 10.1177/0003603X18780557.